Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 1, October-2017, ISSN 2230-7540

संवेदना की कसौटी पर समकालीन हिन्दी कविता

Reena Saroha*

M.A. Hindi, UGC NET (Hindi) Research Scholar, Department of Hindi, NIILM University, Kaithal, Gaon & Post-Ranthdhana, District-Sonipat, Haryana

सार - समकालीन कविता आधुनिक हिन्दी कविता के विकास में वर्तमान काव्यान्दोलन है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाए तो, नयी कविता के बाद उनके काव्यान्दोलनों का प्रचलन हुआ। डॉ. हुकुमचंद राजपाल के अनुसार समकालीन कविता का प्रारंभ सन् 1964 के बाद माना जा सकता है। साठोत्तरी कविता और समकालीन कविता को पर्याय मानना उचित नहीं है। समकालीन कविता, आधुनिक कविता के विकास में नयी चेतना, नयी भाव-भूमि, नयी संवेदना तथा नये शिल्प के बदलाव की सूचक काव्यधारा है। समकालीनता बोध युग-बोध की पहचान का महत्त्वपूर्ण आधार है।[1]

----------X----------

सामाजिक यथार्थ, सपाटबयानी के साथ राजनीति एवं व्यंग्य इसके महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। इस काव्यधारा का लक्ष्य आम आदमी और समाज की वास्तविकता को प्रस्तुत करना है। आलोचकों ने धूमिल को समकालीन कविता का प्रथम सशक्त कवि स्वीकार किया है। मुक्तिबोध, राजकमल चैधरी तथा धूमिल को समकालीनता के तीन पड़ाव मानते हैं। समकालीन कविता युवा पीढ़ी के विद्रोह की प्रस्तोता काव्यधारा है। डॉ. संजय जैन के अनुसार समकालीन काव्यांदोलन, अपनी ऐतिहासिकता में, समसामयिक युग के अन्तविरोधों, अन्तद्वन्द्वों, विसंगतियों, विषमताओं एवं विडम्बनाओं का खुला दस्तावेज है।[2]

डॉ. जैन के अनुसार वर्तमान समाज व्यवस्था से मोहभंग का शिकार हुए आम आदमी के भीतर की पीड़ा, तनाव, विवशता, अकेलेपन, खीझ और गुस्से को उसके कटु अनुभवों की समग्रता का संस्पर्श देने में समकालीन कविता का काव्य-मर्म अन्तनिहित है। समकालीन कविता ने कथ्य एवं टेकनीक के धरातल परम्परित काव्यप्रतिमानों की लीक को तोड़कर साहित्य में युगान्तरकारी परिवर्तन प्रस्तुत किया है। समकालीन कविता का काव्य मर्म नयी चेतना, नयी दृष्टि, नये संकल्पों को अभिव्यक्त करने में अन्तर्निहित है। इस काव्यांदोलन का रचना-मर्म एक ओर जनमानस की संवेदना पर अवस्थित है तो दूसरी ओर समाज और राजनीति की अमानवीय शोषकीय शक्तियों के विरुद्ध व्यंग्य की पैनी धार से ओतप्रोत है। वस्तुतरू समकालीन कविता युगीन यथार्थों की सपाटबयानी होने पर भी उसके काव्य-मर्म की साहित्यिकता असंदिग्ध है। डॉ. संजय जैन के अनुसार इन कवियों ने सृजन-प्रक्रिया के क्षणों में कटु वास्तविकताओं को रूपांतरण की यथार्थ प्रक्रिया से गुजरते हुए कविता को नये बिम्बों, प्रतीकों और नये शब्द-संकेतों से समृद्ध किया। यह काव्यधारा उच्च वर्ग के भीतरी अमानवीय, वीभत्स, घिनौने व्याभिचारी, स्वार्थपरक, घृणित, गलीज, दूषित, भ्रष्टचरित्र का पर्दाफाश करने में सक्षम है। इस काव्यधारा में संवेदना का पुट एवं आत्मीयता का भाव अत्यत गहरा है।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह के अनुसार, ‘समकालीनता का परिदृश्य अनेक आयामी है और इसमें विचारों की अन्तर्धारा भी अनेक आयामी हैं जो ज्ञानात्मक संवेदन को रचनात्मक संदर्भ देती है।’[3]

डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय सन् 1970 के बाद की कविता को विक्षुब्ध कविता कहते हैं जो डॉ. वीरेन्द्र सिंह के मतानुसार समकालीन कविता का एक प्रमुख स्वर है।[4]

डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित के अनुसार समकालीन कविता कालचक्र की सापेक्षता से अनुस्यूत है।[5]

डॉ. राघव प्रकाश के मतानुसार समकालीन कविता घटना की कविता है।[6]

पुनर्जागरण से पूर्व हमारी कविता घटनाओं से ऊपर भावों और विचारों में विचर रही थी। धीरे-धीरे कविता ने अंगड़ाई ली और समकालीन कविता के रूप में जन्म लिया। वस्तुतः घटना से घटना तक ही यात्रा समकालीन यथार्थवादी कविता की यात्रा है।

www.ignited.in

एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

कल एक गाँव जल गया।

उसके पहले - उसके पास वाला गाँव

जल गया था- और उसके पहले भी

उसके पास वाला।

और इस तरह गाँव के गाँव जल गये थे।[7]

यह घटना एक गाँव की नहीं, अपितु 'गाँव के गाँव' जल जाने की घटना क्रमशः एक व्यापक जलन, विनाश का बोध देती है, जिसमें सिर्फ जलन और विनाश है, गाँव गायब हो गये हैं।

समकालीन कविता जब घटना प्रधान होती है तो अन्य तत्त्वों, चरित्र, भावविचार आदि की गौणता से इन्कार नहीं किया जा सकता। ये गौण तत्त्व के सहयोगी होकर आते हैं और प्रधान तत्त्व घटना को पुष्ट और समृद्ध करते हैं। यथा-

दोस्त मेरे तुम मुझे गुमराह मत करो।

डिगरियाँ की बैशाखियों का आदी होकर-मैं जैसे चलना ही भूल गया हूँ।

और जब जब मेरे पाँव फासला मापना चाहते हैं।

मेरे हाथ अनायास इन बैसाखियों की ओर लपकते हैं

और मैं चाहकर भी इस कविता के ठोकरें नहीं लगा पाता

जिसने मुझे- पाँव होते पंगु बना दिया है।

समकालीन कवियों ने देश, लोकतंत्र, संसद, चुनाव, नेता, राजनीति, नैतिकता आदि पर गहरा व्यंग्य किया है। यथा-

देश

यह मेरा देश है-हिमालय से लेकर हिंद महसागर तक फैला हुआ जली हुई मिट्टी का ढेर है।[8]

जनता

जनता क्या है?

एक शब्द .... सिर्फ एक शब्द हैं

कुहरा और कीचड़ और काँच से

बना हुआ .....।

एक भेड़ है

जो दूसरों की ठंड के लिए

अपनी पीठ पर

ऊन की फसल ढो रही है....।9

जनतंत्र

ऐसा जनतंत्र है जिसमें

जिंदा रहने के लिए

घोड़े और घास को

एक जैसी छूट है।

.....

दरअसल, अपने यहाँ जनतंत्र

एक ऐसा तमाशा है

जिसकी जान-मदारी की भाषा है।10

संसद

अपने यहाँ संसद

तेल की यह घानी है

जिसमें आधा तेल है

और आधा पानी है।[11]

समाजवाद

माल गोदाम में लटकती हुई-

उन बाल्टियों की तरह है जिन पर

'आग' लिखा है

और उनमें बालू और पानी भरा है।[12]

राजनीति

संसार में सबसे सुंदर वेश्या का नाम है, राजनीति।[13]

www.ignited.in

समकालीन कविता स्थितियों, तथ्यों, दृश्यों और घटनाओं की कविता है। इस काव्यधारा में बिम्बों की लुकाछिपी के तेवर दिखाई देते हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

पता नहीं मुझसे, क्या गलती हो गई है

आजादी के बाद-देशभक्ति

मेरे कंधे के सिर टकराकर सो गई है।[14]

अगर इन अंशों में देशभक्ति और विनम्रता सम्बन्धी विचार हैं किन्तु देश-भक्ति को कंधे के सिर टिकाकर सोने के बिम्ब से व्यक्त किया गया है। एक अन्य उदाहरण द्रष्टव्य है-

हाँ यह सही है कुर्सियाँ वहीं हैं

सिर्फ टोपियाँ बदल गई हैं।

मैंने देखा कि हर तरफ-मूढ़ता की हरी-हरी घास लहरा रही है,

जिसे जंगली पशु-खूंद रहे-लीद रहे हैं-चर रहे हैं।[15]

आजादी के बाद प्रशासन में कोई मूलभूत अन्तर नहीं आया है। इस विचार को 'कुर्सियों' और 'टोपियों' के माध्यम से कहा गया है। सारी व्यवस्था में जो विवेक शून्यता नजर आती है उसे जंगली पशुओं द्वारा हरी-हरी घास चरने, खूंदने और लीदने से व्यक्त किया गया है। वस्तुतः यह काव्यधारा सारी व्यवस्था के विरुद्ध बगावत कर देना चाहती है।

'समकालीन कविता' की मूल चेतना पर प्रकाश डालते हुए साहित्य मनीषी प्रोफेसर डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय लिखते हैं-

"घर परिवार, कार्यालय, शिक्षा निकेतन, सत्ता के गलियारे, सेठध्प्रशासकध्नेता आदि सम्पन्न व्यक्तियों के परिसरध्निवास, निर्वाचन स्थल, संग्रह और वितरण केन्द्र, सामान्यजन, कविध् लेखकध् कलाकार की कद्र नहीं है और उसे सर्वत्र प्रपंच पशुता और पाखंड दिखाई देता है। ऊपरी चकाचैंध और सभ्यता के भीतर भय एवं वीभत्सता दिखाई देती है।"[16] उन्होंने यह भी कहा है- जन क्रांति के बिना वैषम्यमूलक ढाँचा परिवर्तित नहीं हो सकता। देश में कहीं ऊब और अवसाद, कहीं ग्लानि, कहीं गाली, कहीं शाप, कहीं स्तुति या जराकारा, कहीं नारा, कहीं उच्चाटन, कहीं प्रताडना, कहीं भत्र्सना आदि दिखाई देता है, जिसकी प्रस्तुति का जिम्मा समकालीन कविता ने ले रखा है। समकालीन कविता में जनान्दोलन की संवेदना से संपृक्त भाषा की अदा, कथन-भंगिमा और अंदाजे बयाँ स्वतरू ही बदल गया है। यह काव्यधारा पिष्टपेष्टिक मुहावरे और बहुत प्रयुक्त शब्दावली को अभिव्यक्ति को व्यर्थ समझकर जनजीवन की मिली-जुली बोली का अभिनव प्रयोग करती है। कथन भंगिमाओं के नये प्रकार सामान्य जनता के लहजों में मिलते हैं।

डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय ने समकालीन कविता की संवेदना पर गंभीर टिप्पणी, पुरजोर शब्दों में प्रस्तुत करते हुए कहा है- "जिस देश में लूट मची हो, बलात्कारी अट्टहास, तंग दिली, तंग नजरी के ताव में सिर कट-कटकर गिर रहे हों, लोथों के पहाड़ लग रहे हों, भ्रष्टों, धूत्र्तों और धंधेबाजों की धांधली हो, वहाँ प्रबुद्ध रचनाकार रस की रचना-प्रक्रिया न अपनाकर स्वयंमेव विष की रचनात्मकता में रत हो जाता है।"[17]

समकालीन कविता की आलोचना करते हुए डॉ. प्रभाकर श्रोतिय लिखते हैं- साहित्य का क्षेत्र साधना का क्षेत्र है और साधना समय लेती है। पिछले दो दशकों में जन्में कवियों की ऐसी कितनी कृतियाँ हैं, जिन्हें उत्कृष्ट रचनाओं के रूप में रेखांकित करना संभव नहीं लगता। कतिपय कवि नई सृजन-चेतना से अपने को अनुकूलित नहीं कर पाते और स्वयं को फीका महसूस करने लगते हैं।

डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, डॉ. हुकुमचदं राजपाल आदि अनेक समीक्षक समकालीन कविता को 'विद्रोही कविता' नाम देते हैं। समकालीन कविता आंदोलन ने स्थाई महत्व की कविताओं का सृजन किया है। यथा- 'संसद से सडक तक' (धूमिल), 'नाटक जारी है' (लीलाधर जगूड़ी), 'आत्महत्या के विरुद्ध' (रघुवीर सहाय), 'वे हाथ होते हैं' (वेणु गोपाल), 'भूखण्ड तप रहा है' (चन्द्रकांत देवताले), 'इतिहास का संवाद' (कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह)।

समकालीन काव्यांदोलन का प्रारंभ अत्यन्त विवादास्पद है। डॉ. रवीन्द्र भ्रमर समकालीन को स्वतंत्रता प्राप्ति से आरंभ हुआ मानते हुए लिखते हैं-

'स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की कविता समकालीन हिन्दी कविता स्वाधीन भारत की कविता है।'[18] डॉ. सुखदेव सिंह समकालीन कविता के तीन पड़ाव माने हैं, पहला दौर 1950 से 1960 के बीच का है। इसे नयी कविता के आंदोलन का दौर भी कह सकते हैं। दूसरा पड़ाव 1960 से 1970 के बीच का है। यह साठोत्तरी का दौर है। तीसरा दौर 1970 से 1980 कके बीच का

www.ignited.in

है, इसमें विचार कविता का आंदोलन सामने आया। इस प्रकार से समकालीन कविता के तीन दौर हुए।[19]

डॉ. भ्रमर और डॉ. सिंह के अनुसार इस काव्यांदोलन की सन् 1950 से 1980 तक की अवधि भ्रामक धारणाओं को बढ़ावा देती है। समकालीन कविता में सन् 1965 में सामुहिक अनुभव के स्तर पर विद्रोह और आस्था के स्वर प्रस्फुटित होने लगे थे। यहाँ यह स्पष्ट करना समीचीन होगा कि 'समकालीन कविता' काव्यान्दोलन को किसी विशेष वाद में नहीं बाँधा सकता, अपितु इसे एक काव्य-प्रवृत्ति विशेष स्वीकार किया जा सकता है।

समकालीन काव्यधारा को विकसित करने में अनेक कवियों की भूमिका रही है, उनमें प्रमुख हैं- धूमिल, मुक्तिबोध, लीलाधर जगूड़ी, कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, वेणुगोपाल, चन्द्रकांत देवताले, राजकुमार कुम्भज, कुमार विकल, राजेन्द्र व्यथित आदि। यह काव्यांदोलन निरंतर प्रवहमान है। सन् 1980 से लेकर आज तक यह धारा अपना अस्तित्व बनाए हुए है। आज भी नवोदित कवि इस काव्यधारा से जुड़े हुए हैं जिनमें प्रमुख हैं- मंगलेश डबराल, अष्टभुजा, शुक्ल राजेश जोशी, संजय कुंदन, असदजैदी, आलोकधन्वा, कुँवर नारायण, अनाकमि, कात्यायनी, विजेन्द्र, जितेन्द्र श्रीवास्तव, मदन कश्यप, एकांत श्रीवास्तव, ओम करुणेश, कुमार अंबुज, अरुण कमल, ओमसिंह अश्$फाक, जयपाल आदि।

आवश्यकता इस बात की है कि आज का समकालीन कवि आक्रोश, विरोध एवं विद्रोह के स्वरों से ओतप्रोत होकर काव्य-सृजन करें। समाज की समस्याओं को पैनी दृष्टि से देखना होगा। समकालीन बोध वास्तव में युग-बोध है। आज के कवि को चाहिए कि वह लीक से हटकर नये उपमानों, नये बिम्बों का सृजन करे। समकालीन कविता का स्त्रोत सूखा नहीं है। यह एक प्रवहमान धारा है। जनता से सहानुभूति का दवा करने वाली कविता भी अगर तकनीकी ढंग से लिखी जाए और उसमें विचलित, उत्पे्ररित या अपील करने की शक्ति न हो तो लोग उसे क्यों पढना चाहेंगे? वर्तमान कृत्रिमताओं और आत्म प्रवंचनाओं के चलते केवल लोकभाषा के शब्द या छंद कविता को लोकहृदय तक पहुँचाने में सक्षम हो सकते हैं। डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा लिखते हैं- "कोई भी काव्यांदोलन जब तक जातीय जीवन के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक आयामों को विवेक, आस्था और संवेदना के स्तर पर आत्मसात् नहीं करेगा, तब तक स्थायी महत्त्व की कृतियों को जन्म नहीं दे सकेगा।"[20]

संदर्भ

1. हुकमचंद राजपाल, समकालीन कविता की कथ्य चेतना (दो शब्द)
2. संजय जैन, समकालीन कविता की कथ्य चेतना, पृ. 1
3. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 1
4. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 5
5. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 5
6. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 33
7. कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, कविता का जन्म, पृ. 10
8. धूमिल, 'पटकथा'
9. धूमिल, 'पटकथा'
10. धूमिल, 'पटकथा'
11. धूमिल, 'पटकथा'
12. लीलाधर जगूड़ी, 'इस व्यवस्था में'
13. धूमिल, 'पटकथा'
14. लीलाधर जगूड़ी, 'इस व्यवस्था में'
15. धूमिल, 'पटकथा'
16. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 47
17. वीरेन्द्र सिंह, समकालीन कविता, पृ. 50
18. संजय जैन, समकालीन की कथ्य चेतना, पृ. 7
19. संजय जैन, समकालीन की कथ्य चेतना, पृ. 7
20. हरिश्चन्द्र वर्मा, नयी कविता में नाट्यकाव्य, पृ. 33

Corresponding Author

Reena Saroha*

M.A. Hindi, UGC NET (Hindi) Research Scholar, Department of Hindi, NIILM University, Kaithal, Gaon & Post-Ranthdhana, District-Sonipat, Haryana